हिन्दू बनाम हिन्दू : डॉ. राममनोहर लोहिया

भारतीय इतिहास की सबसे बड़ी लड़ाई हिन्दू धर्म में उदारवाद और कट्टरता की लड़ाई , पिछले पांच हजार सालों से भी अधिक समय से चल रही है और उसका अन्त अभी भी दिखाई नहीं पड़ता । इस बात की कोई कोशिश नहीं की गयी , जो होनी चाहिए थी , कि इस लड़ाई को नजर में रखकर हिन्दुस्तान के इतिहास को देखा जाए , उसे बुना जाय । लेकिन देश में जो कुछ होता है , उसका बहुत बड़ा हिस्सा इसी के कारण होता है ।

सभी धर्मों में किसी-न-किसी समय उदारवादियों और कट्टरपंथियों की लड़ाई हुई है । लेकिन हिन्दू धर्म के अलावा वे बंट गये , अक्सर उनमें रक्तपात हुआ और थोड़े या बहुत दिनों की लड़ाई के बाद , वे झगड़े पर काबू पाने में कामयाब हो गये । हिन्दू धर्म में लगातार उदारवादियों और कट्टरपंथियों का झगड़ा चला आ रहा है । जिसमें कभी एक की जीत होती है कभी दूसरे की । खुला रक्तपात तो कभी नहीं हुआ , लेकिन झगड़ा आजतक हल नहीं हुआ और झगड़े के सवालों पर एक धुन्ध छा गयी है ।

ईसाई , इस्लाम और बौद्ध , सभी धर्मों में झगड़े-विभेद हुए । कैथोलिक मत में एक समय इतने कट्टर पंथी तत्त्व इकट्ठा हो गए कि प्रोटेस्टेंट मत ने , जो उस समय उदारवादी था , उसे चुनौती दी । लेकिन सभी लोग जानते हैं कि सुधार आन्दोलन के बाद प्रोटेस्टेंट मत में खुद में कट्टरता आ गयी । कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट मतों के सिद्धान्तों में अब भी बहुतेरे फर्क हैं लेकिन एक को कट्टर पंथी और दूसरे को उदारवादी कहना मुश्किल है । ईसाई धर्म में सिद्धान्त और संगठन का भेद है तो इस्लाम धर्म में शिया-सुन्नी का बंटवारा इतिहास से सम्बन्धित है । इसी तरह बौद्ध धर्म हीनयान और महायान के दो मतों में बंट गया , और उनमें कभी रक्तपात तो नहीं हुआ , लेकिन उनका मतभेद सिद्धान्त के बारे में है , समाज की व्यवस्था से उसका कोई सम्बन्ध नहीं ।

हिन्दू धर्म में ऐसा कोई बंटवारा नहीं हुआ । अलबत्ता वह बराबर छोटे-छोटे मतों में टूटता रहा है । नया मत उतनी ही बार उसके एक नये हिस्से के रूप में वापस आ गया है । इसीलिए सिद्धान्त के सवाल कभी साथ-साथ नहीं उठे और परिभाषित नहीं हुए , सामाजिक संघर्षों का हल नहीं हुआ । हिन्दू धर्म नये मतों को जन्म देने में उतना ही तेज है जितना प्रोटेस्टेन्ट मत , लेकिन उन सभी के ऊपर वह एकता का एक अजीब आवरण डाल देता है जैसी एकता कैथोलिक संगठनों ने अन्दरूनी भेदों पर रोक लगा कर कायम की है । इस तरह हिन्दू धर्म में जहां एक ओर कट्टरता और अन्धविश्वास का घर है , वहां नई-नई खोजों की व्यवस्था भी है । हिन्दू धर्म अब तक अपने अन्दर उदारवाद और कट्टरता के झगड़े का हल क्यों नहीं कर सका , इसका पता लगाने की कोशिश करने

के पहले , जो बुनियादी दृष्टिभेद हमेशा रहा है , उस पर नजर डालना जरूरी है । **चार बड़े और ठोस सवालों - वर्ण , स्त्री , सम्पत्ति और सहनशीलता के बारे में हिन्दू धर्म बराबर उदारवाद और कट्टरता का रुख बारीबारी से लेता रहा है ।**

चार हजार साल या उससे भी अधिक समय पहले कुछ हिन्दुओं के कान में दूसरे हिन्दुओं के द्वारा सीसा गलाकर डाल दिया जाता था और उनकी जबान खींच ली जाती थी । क्योंकि वर्ण व्यवस्था का नियम था कि कोई शूद्र वेदों को पढे या सुने नहीं । तीन सौ साल पहले शिवाजी को यह मानना पड़ा था कि उनका वंश हमेशा ब्राह्मणों को ही मन्त्री बनायेगा ताकि हिन्दू रीतियों के अनुसार उनका राजतिलक हो सके । करीब दो सौ वर्ष पहले , पनीपत की आखिरी लड़ाई में जिसके फलस्वरूप हिन्दुस्तान पर अंग्रेजों का राज्य कायम हुआ , एक हिन्दू सरदार दूसरे सरदार से इसलिए लड़ गया कि वह , अपने वर्ण के अनुसार ऊंची जमीन पर तम्बू लगाना चाहता था । करीब पन्द्रह साल पहले एक हिन्दू ने हिन्दुत्व की रक्षा करने की इच्छा से महात्मा गांधी पर बम फेंका था , क्योंकि उस समय वे छुआछूत का नाश करने में लगे थे । कुछ दिनों पहले तक , और कुछ इलाकों में अब भी हिन्दू नाई अछूत हिन्दुओं की हजामत बनाने को तैयार नहीं होते , हालांकि गैर हिन्दुओं का काम करने में उन्हें कोई एतराज नहीं होता ।

इसके साथ ही प्राचीन काल में वर्ण व्यवस्था के खिलाफ दो बड़े विद्रोह हुए । एक पूरे उपनिषद में वर्णव्यवस्था को सभी रूपों में पूरी तरह खतम करने की कोशिश की गयी है । हिन्दुस्तान के प्राचीन साहित्य में वर्ण-व्यवस्था का जो विरोध मिलता है , उसके रूप , भाषा और विस्तार से पता चलता है कि ये विरोध दो अलग-अलग कालों में हुए - एक आलोचना का काल और दूसरा निन्दा का । इस सवाल को भविष्य की खोजों के लिए छोड़ा जा सकता है , लेकिन इतना साफ है कि मौर्य और गुप्त वंशों के स्वर्ण-काल , वर्ण-व्यवस्था के एक व्यापक विरोध के बाद हुए । लेकिन वर्ण कभी पूरी तरह खतम नहीं होते । कुछ कालों में बहुत सख्त होते हैं और कुछ अन्य कालों में उनका बंधन ढीला पड़ जाता है । कट्टरपन्थी और उदारवादी , वर्ण व्यवस्था के अन्दर ही एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं और हिन्दू इतिहास के दो कालों में एक या दूसरी धारा के प्रभुत्व का ही अन्तर होता है । इस समय उदारवादी का जोर है और कट्टर पंथियों में इतनी हिम्मत नहीं कि वे मुखर हो सकें । लेकिन कट्टरता उदारवादी विचारों में घुसकर अपने को बचाने की कोशिश कर रही है ।अगर जन्मना वर्णों की बात करने का समय नहीं तो कर्मणा जातियों की बात की जाती है । अगर लोग वर्ण व्यवस्था का समर्थन नहीं करते तो उसके खिलाफ काम भी शायद ही कभी करते हैं और एक वातावरण बन गया है जिसमें हिन्दुओं की तर्क बुद्धि और उनकी दिमागी आदतों में टकराव है । व्यवस्था के रूप में वर्ण कहीं-कहीं ढीले हो गए हैं लेकिन दिमागी आदत के रूप में अभी भी मौजूद हैं । इस बात की आशंका है कि हिन्दू धर्म में कट्टरता और उदारता का झगड़ा अभी भी हल न हो ।

आधुनिक साहित्य ने हमें यह बताया है कि केवल स्त्री ही जानती है कि उसके बच्चे का पिता कौन है , लेकिन तीन हजार वर्ष या उसके भी पहले जबाला को स्वयं भी नहीं मालूम था कि उसके बच्चे का पिता कौन है और प्राचीन साहित्य में उसका नाम एक पवित्र स्त्री के रूप में आदर के साथ लिया गया है । हालांकि वर्ण-व्यवस्था ने उसके बेटे को ब्राह्मण बनाकर उसे भी हजम कर लिया । उदार काल का साहित्य हमें चेतावनी देता है कि परिवारों के स्रोत की खोज नहीं करनी चाहिए क्योंकि नदी के स्रोत की तरह वहां भी गन्दगी होती है । अगर स्त्री बलात्कार का सफलतापूर्वक विरोध न कर सके तो उसे कोई दोष नहीं होता क्योंकि इस साहित्य के अनुसार स्त्री का शरीर हर महीने नया हो जाता है । स्त्री को भी तलाक और सम्पत्ति का अधिकार है । हिन्दू धर्म के स्वर्ण युगों में स्त्री के प्रति यह उदार दृष्टिकोण मिलता है जबकि कट्टरता के युगों में उसे केवल एक प्रकार की सम्पत्ति माना गया है जो पिता , पति या पुत्र के अधिकार में रहती है । इस समय हिन्दू स्त्री एक अजीब स्थिति में है , जिसमें उदारता भी है और कट्टरता भी । दुनिया के और भी हिस्से से यहां स्त्री के लिए सम्मान पूर्ण पद पाना आसान है लेकिन सम्पत्ति और विवाह के सम्बन्ध में पुरुष के समान ही स्त्री के भी अधिकार हों , इसका विरोध अब भी होता है । मुझे ऐसे पर्चे पढ़ने को मिले जिनमें स्त्री को सम्पत्ति का अधिकार न देने की वकालत इस तर्क पर की गई थी कि वह दूसरे धर्म के व्यक्ति से प्रेम करने लग कर अपना धर्म न बदल दे , जैसे यह दलील पुरुषों के लिए कहीं ज्यादा सच न हो । जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े न हों , यह अलग सवाल है , जो स्त्री व पुरुष दोनों वारिसों पर लागू होता है ,और एक सीमा से छोटे टुकड़ों और टुकड़ों के और टुकड़े न होने पायें , इसका कोई तरीका निकालना चाहिए । जब तक कानून या रीति-रिवाज या दिमागी आदतों में स्त्री और पुरुष के बीच विवाह और सम्पत्ति के बारे में फर्क रहेगा ,तब तक कट्टरता पूरी तरह खतम नहीं होगी । हिन्दुओं के अन्दर स्त्री को देवी के रूप में देखने की इच्छा , जो अपने उच्च स्थान से कभी न उतरे , उदार-से-उदार लोगों के दिमाग में भी बेमतलब के और सन्देहास्पद खयाल पैदा कर देती है । उदारता और कट्टरता एक-दूसरे से जुड़ी रहेंगी जब तक हिन्दू अपनी स्त्री को अपने समान ही इन्सान नहीं मानने लगता ।

हिन्दू धर्म सम्पत्ति की भावना , संचय न करने और लगाव न रखने के सिद्धान्त के कारण उदार है । लेकिन कट्टरपंथी हिन्दू कर्म सिद्धान्त की इस प्रकार व्याख्या करता है कि धन और जन्म या शक्ति में बड़े व्यक्ति का स्थान ऊंचा है और जो कुछ है , वही ठीक भी है । सम्पत्ति का मौजूदा सवाल कि मिल्कियत निजी हो या सामाजिक हाल ही का है । लेकिन सम्पत्ति की स्वीकृत व्यवस्था या सम्पत्ति से कोई लगाव न रखने के रूप में यह सवाल हिन्दू दिमाग में बराबर रहा है । अन्य सवालों की तरह सम्पत्ति और शक्ति के सवालों पर भी हिन्दू दिमाग अपने विचारों को अपनी तार्किक परिणति तक कभी नहीं ले जा पाया । समय और व्यक्ति के साथ हिन्दू धर्म में इतना ही फर्क पड़ता

है कि सम्पत्ति के एक या दूसरे विचार को प्राथमिकता मिलती है। आम तौर पर यह माना जाता है कि सहिष्णुता हिन्दुओं का विशेष गुण है। यह गलत है , सिवाय इसके कि खुला उत्पात अभी तक उसे पसन्द नहीं रहा ।हिन्दू धर्म में कट्टर पंथी हमेशा प्रभुताशाली मत के अलावा अन्य मतों और विश्वासों का दमन करके एकरूपता के द्वारा एकता कायम करने की कोशिश करते रहे हैं लेकिन उन्हें कभी सफलता नहीं मिली ।उन्हें अब तक , आम तौर पर , बचपना ही माना जाता था क्योंकि कुछ समय पहले तक विविधता में एकता का सिद्धान्त हिन्दू धर्म के अपने मतों पर ही लागू किया जाता था। इसलिए हिन्दू धर्म में लगभग हमेशा ही सहिष्णुता का अंश बल प्रयोग से ज्यादा रहता था। लेकिन यूरोप के बुद्धिवाद ने इससे मिलते-जुलते जिस सिद्धान्त को जन्म दिया है , उससे उसका अर्थ समझ लेना चाहिए। वाल्टेयर जानता था कि उसका विरोधी गलती पर है ,फिर भी वह सहिष्णुता के के लिए , विरोध के खुलकर बोलने के अधिकार के लिए लड़ने को तैयार था इसके विपरीत हिन्दू धर्म में सहिष्णुता की बुनियाद पर यह है कि अलग-अलग बातें भी अपनी जगह पर सही हो सकती हैं। वह मानता है कि अलग -अलग क्षेत्रों और वर्गों में अलग सिद्धान्त और चलन हो सकते हैं , और उनकी बीच वह कोई फैसला करने को तैयार नहीं। वह आदमी की जिन्दगी में एकरूपता नहीं चाहता , स्वेच्छा से भी नहीं , और ऐसी विविधता में एकता चाहता है जिसकी परिभाषा नहीं की जा सकती , लेकिन जो अब तक उसके अलग - अलग मतों को एक लड़ी में पिरोती रही है। अत: उसमें सहिष्णुता का गुण इस विश्वास के कारण है कि किसी भी जिन्दगी में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए इस विश्वास के कारण कि अलग-अलग बातें गलत ही हों यह जरूरी नहीं है , बल्कि वे सच्चाई को अलग - अलग ढंग से व्यक्त कर सकती हैं।

कट्टरपंथियों ने अक्सर हिन्दू धर्म में एकरूपता की एकता कायम करने की कोशिश की है। उनके उद्देश्य हमेशा संदिग्ध नहीं रहे। उनकी कोशिशों के पीछे अक्सर शायद स्थायित्व और शक्ति की इच्छा थी , लेकिन उनके कामों के नतीजे हमेशा बहुत बुरे हुए। मैं भारतीय इतिहास का एक भी ऐसा काल नहीं जानता जिसमें कट्टरपंथी हिन्दू धर्म भारत में एकता या खुशहाली ला सका हो। जब भी भारत में एकता या खुशहाली आई , तो हमेशा वर्ण , स्त्री , सम्पत्ति , सहिष्णुता आदि के सम्बन्ध में हिन्दू धर्म में उदारवादियों का प्रभाव अधिक था। हिन्दू धर्म में कट्टरपंथी जोश बढ़ने पर हमेशा देश सामाजिक और राज्नीतिक दृष्टियों से टूटा है और भारतीय राष्ट्र में , राज्य और समुदाय के रूप में बिखराव आया है। मैं नहीं कह सकता कि ऐसे सभी काल , जिनमें देश टूट कर छोटे-छोटे राज्यों में बंट गया , कट्टरपंथी प्रभुता के काल थे , लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि देश में एकता तभी आई जब हिन्दू दिमाग पर उदार विचारों का प्रभाव था।

आधुनिक इतिहास में देश में एकता लाने की कई बड़ी कोशिशें असफल हुईं। ज्ञानेश्वर का उदार मत शिवाजी और प्रथम बाजीराव के काल में अपनी चोटी पर पहुंचा , लेकिन सफल होने के पहले

ही पेशवाओं की कट्टरता में गिर गया । फिर गुरु नानक के उदारमत से शुरु होने वाला आन्दोलन रणजीत सिंह के समय अपनी चोटी पर पहुंचा , लेकिन जल्द ही सिक्ख सरदारों के कट्टरपंथी झगड़ों में पतित हो गया । ये कोशिशें , जो एक बार असफल हो गयीं , आजकल फिर से उठने की बड़ी तेज कोशिशें करतीं हैं , क्योंकि , इस समय महाराष्ट्र और पंजाब से कट्टरता की जो धारा उठ रही है , उसका इन कोशिशों से गहरा और पापपूर्ण आत्मिक सम्बन्ध है । इन सब में भारतीय इतिहास के विद्यार्थी के लिए पढ़ने और समझने की बड़ी सामग्री है जैसे धार्मिक सन्तों और देश में एकता लाने की राजनीतिक कोशिशों के बीच कैसा निकट सम्बन्ध है या कि पतन के बीज कहां हैं, बिलकुल शुरु में या बाद की किसी गड़बड़ी में या कि इन समूहों द्वारा अपनी कट्टरपंथी सफलताओं को दुहराने की कोशिशों के पीछे क्या कारण हैं ? इसी तरह विजयनगर की कोशिश और उसके पीछे प्रेरणा निम्बार्क की थी या शंकराचार्य की , हुम्फी की महानता के पीछे कौन-सा सड़ा हुआ बीज था , इन सब बातों की खोज से बड़ा लाभ हो सकता है । फिर शेरशाह और अकबर की उदार कोशिशों के पीछे क्या था और औरंगजेब की कट्टरता के आगे उनकी हार क्यों हुई ।

देश में एकता लाने की भारतीय लोगों और महात्मा गांधी की एकदम हाल की कोशिश कामयाब हुई है , लेकिन आंशिक रूप में ही।इसमें कोई शक नहीं कि पांच हजार वर्षों से अधिक की उदारवादी धाराओं ने इस कोशिश को आगे बढ़ाया , लेकिन इसके तकालीन स्रोत में यूरोप के उदारवादी प्रभाव के अलावा क्या है, तुलसी या कबीर या चैतन्य और सन्तोंकी महान परम्परा या अधिक हाल के धार्मिक राजनीतिक नेता जैसे राममोहन राय और फैजाबाद के विद्रोही मौलवी । फिर, पिछले पांच हजार सालों की कट्टरपंथी धारायें भी मिलकर इस कोशिश को असफल बनाने के लिए जोर लगा रही हैं और अगर इस बार कट्टरता की हार हुई , तो वह फिर नहीं उठेगी ।

केवल उदारता ही देश में एकता ला सकती है । हिन्दुस्तान बहुत बड़ा और पुराना देश है । मनुष्य की इच्छा के अलावा कोई शक्ति इसमें एकता नहीं ला सकती । कट्टरपंथी हिन्दुत्व अपने स्वभाव के कारण ही ऐसी इच्छा नहीं पैदा कर सकता , लेकिन उदार हिन्दुत्व कर सकता है , जैसा पहिले कई बार कर चुका है । हिन्दू धर्म संकुचित दृष्टि से , राजनीतिक धर्म , सिद्धान्तों और संगठन का धर्म नहीं है । लेकिन राजनीतिक देश के इतिहास में एकता लाने की बड़ी कोशिशों को इससे प्रेरणा मिली है ,और उनका यह प्रमुख माध्यम रहा है ।हिन्दू धर्म में उदारता और कट्टरता के महान युद्ध को देश की एकता और बिखराव की शक्तियों का संघर्ष भी कहा जा सकता है । लेकिन उदार हिन्दुत्व पूरी तरह समस्या का हल नहीं कर सका । विविधता में एकता के सिद्धान्त के पीछे सड़न और बिखराव के बीज छिपे हैं । कट्टरपंथी तत्वों के अलावा जो हमेशा ऊपर से उदार हिन्दू विचारों में घुस आते हैं और हमेशा दिमागी सफाई हासिल करने में रुकावट डालते हैं , विविधता में एकता का सिद्धान्त ऐसे दिमाग को जन्म देता है जो समृद्ध और निष्क्रिय दोनों ही है । हिन्दू धर्म का

बराबर छोटे-छोटे मतों में बंटते रहना बड़ा बुरा है, जिनमें से हर एक अपना अलग शोर मचाये रहता है और उदार हिन्दुत्व उनको एकता के आवरण में ढकने की चाहे जितनी भी कोशिश करे , वे अनिवार्य ही राज्य के सामूहिक जीवन में कमजोरी पैदा करते हैं।एक आश्चर्यजनक उदासीनता फैल जाती है ।कोई इन बराबर होने वाले बंटवारों की चिन्ता नहीं करता जैसे सबको यकीन हो कि वे एक दूसरे के ही अंग हैं । इसी से कट्टरपंथी हिन्दुत्व को अवसर मिलता है और शक्ति की इच्छा के रूप में चालक शक्ति मिलती है , हालांकि उसकी कोशिशों के फलस्वरूप और भी ज्यादा कमजोरी पैदा होती है ।

उदार और कट्टरपंथी हिन्दुत्व के महायुद्ध का बाहरी रूप आज-कल यह हो गया है कि मुसलमानों के प्रति क्या रुख हो । लेकिन हम एक क्षण के लिए भी यह न भूलें कि यह बाहरी रूप है और बुनियादी झगड़े जो अभी तक हल नहीं हुए , कहीं अधिक निर्णायक हैं। महात्मा गांधी की हत्या , हिन्दू-मुस्लिम झगड़े की घटना उतनी नहीं थी जितनी हिन्दू धर्म की उदार व कट्टरपंथी धाराओं के युद्ध की। इसके पहले कभी किसी हिन्दू ने वर्ण , स्त्री , सम्पत्ति और सहिष्णुता के बारे में कट्टरता पर इतनी गहरी चोट नहीं की थीं। इसके खिलाफ सारा जहर इकट्ठा हो रहा था । एक बार पहले भी गांधीजी की हत्या करने की कोशिश की गई थी । उस समय उसका खुला और साफ उद्देश्य यही था कि वर्ण व्यवस्था को बचाकर हिन्दू धर्म की रक्षा की जाय । आखिरी और कामयाब कोशिश का उद्देश्य ऊपर से यह दिखाई पड़ता था कि इस्लाम के हमले से हिन्दू धर्म को बचाया जाय , लेकिन इतिहास के किसी भी विद्यार्थी को कोई सन्देह नहीं होगा कि यह सबसे बड़ा और जघन्य जुआ था , जो हारती हुई कट्टरता ने उदारता से अपने युद्ध में खेला । गांधीजी का हत्यारा , वह कट्टरपंथी तत्व था जो हमेशा हिन्दू दिमाग के अन्दर बैठा रहता है , कभी दबा हुआ और कभी प्रकट , कुछ हिन्दुओं में निष्क्रिय और कुछ में तेजी से । जब इतिहास के पन्ने गांधीजी की हत्या को कट्टरपंथी - उदार हिन्दुत्व के युद्ध की एक घटना के रूप में रखेंगे और उन सभी पर अभियोग लगायेंगे जिन्हें वर्णों के खिलाफ और स्त्रियों के हक में , सम्पत्ति के खिलाफ और सहिष्णुता के हक में , गांधीजी के कामों से गुस्सा आया था , तब शायद हिन्दू धर्म की निष्क्रियता और उदासीनता नष्ट हो जाए ।

अब तक हिन्दू धर्म के अन्दर कट्टर और उदार एक - दूसरे से जुड़े क्यों रहे और अभी तक उनके बीच कोई साफ और निर्णायक लड़ाई क्यों नहीं हुई , यह एक ऐसा विषय है जिस पर भारतीय इतिहास के विद्यार्थी खोज करें तो बड़ा लाभ हो सकता है ।अब तक हिन्दू दिमाग से कट्टरता कभी पूरी तरह दूर नहीं हुई , इसमें कोई शक नहीं । इस झगड़े का कोई हल न होने के विनाशपूर्ण नतीजे निकले , इसमें भी कोई शक नहीं । जब तक हिन्दुओं के दिमाग में वर्णभेद बिल्कुल ही खतम नहीं होते, या स्त्री को बिल्कुल पुरुष के बराबर ही नहीं माना जाता , या सम्पत्ति और व्यवस्था के

सम्बन्ध को पूरी तरह तोड़ा नहीं जाता तब तक कट्टरता भारतीय इतिहास में अपना विनाशकारी काम करती रहेगी और उसकी निष्क्रियता को कायम रखेगी । अन्य धर्मों की तरह हिन्दू धर्म सिद्धान्तों और बंधे हुए नियमों का धर्म नहीं है बल्कि सामाजिक संगठन का एक ढंग है , और यही कारण है कि उदारता और कट्टरता का युद्ध कभी समाप्ति तक नहीं लड़ा गया और ब्राह्मण-बनिया मिलकर सदियों से देश पर अच्छा या बुरा शासन करते आए हैं जिसमें कभी उदारवादी ऊपर रहते हैं कभी कट्टरपंथी ।

उन चार सवालों पर केवल उदारता से काम नहीं चलेगा । अंतिम रूप से उनका हल करके हिन्दू दिमाग से इस झगड़े को पूरी तरह खतम करना होगा । इन सभी हल न होनेवाले झगड़ों की पीछे निर्गुण और सगुण सत्य के सम्बन्ध का दार्शनिक सवाल है । इस सवाल पर उदार और कट्टर हिन्दुओं के रुख में बहुत कम अन्तर है । मोटे तौर पर , हिन्दू धर्म सगुण सत्य के आगे निर्गुण सत्य की खोज में जाना चाहता है , वह सृष्टि को झूठा तो नहीं मानता लेकिन घटिया किस्म का सत्य मानता है । दिमाग से उठकर परम सत्य तक पहुंचने के लिये वह इस घटिया सत्य को छोड़ देता है । वस्तुत: सभी देशों का दर्शन इसी सवाल को उठाता है । दूसरे देशों में यह सवाल अदिकतर दर्शन में ही सीमित रहा है , जबकि हिन्दुस्तान में यह जनसाधारण के विश्वास का एक अंग बन गया है ।

दर्शन को संगीत की धुनें दे कर विश्वास में बल दिया गया है । दार्शनिकों ने परम सत्य की खोज में आम तौर पर सांसारिक सत्य से बिल्कुल ही इन्कार किया है । इस कारण आधुनिक विश्व पर उसका प्रभाव बहुत कम पड़ा है । लेकिन दूसरे देशों में वैज्ञानिक और सांसारिक भावना ने बड़ी उत्सुकता से प्रकृति की सारी जानकारी को इकट्ठा किया , अलग - अलग करके क्रमबद्ध किया और उन्हें एक में बाँधने वाले नियम खोज निकाले ।इससे आधुनिक मनुष्य को , जो मुख्यत: यूरोपीय है , जीवन पर विचार कर एक खास दृष्टिकोण मिला है । वह सगुण सत्य को , जैसा है वैसा ही बड़ी खुशी से स्वीकार लेता है । इसके अलावा ईसाई मत की नैतिकता ने मनुष्य के अच्छे कामों को ईश्वरीय काम का पद प्रदान किया है ।इन सबके फलस्वरूप जीवन की असलियतों का वैज्ञानिक और नैतिक उपयोग होता है । लेकिन हिन्दू धर्म कभी अपने दार्शनिक आधार से छुटकारा नहीं पा सका । लोगों का साधारण विश्वास भी व्यक्त और प्रकट सगुण सत्य से आगे जाकर अव्यक्त और अप्रकट निर्गुण सत्य को देखना चाहता है । यूरोप में भी मध्य युग में ऐसा ही दृष्टिकोण था लेकिन फिर कह दूं कि यह दार्शनिकों तक ही सीमित था और सगुण सत्य से इन्कार कर करके उसे नकली मानता था जबकि आम लोग ईसाई मत को नैतिक विश्वास के रूप में मानते थे और उस हद तक स्वीकार करते थे । हिन्दू धर्म ने कभी जीवन की असलियतों से बिल्कुल इन्कार नहीं किया बल्कि

वह उन्हें घटिया किस्म का सत्य मानता है और आज तक हमेशा ऊंचे प्रकार के सत्य की खोज करने की कोशिश करता रहा है । यह लोगों के साधारण विश्वास का अंग है ।

एक बड़ा अच्छा उदाहरण मुझे याद आता है । कोणार्क के विशाल लेकिन आधे नष्ट मंदिर में पत्थरों पर हजारों मूर्तियां खुदी हुई मिलती हैं। जिन्दगी की असलियतों की तस्वीरें देने में कलाकार ने किसी तरह की की कंजूसी या संकोच नहीं दिखाया है । जिंदगी की सारी विभिन्नताओं को उसने स्वीकार किया है । उसमें भी एक क्रमबद्ध व्यवस्था मालूम पड़ती है । सबसे नीचे की मूर्तियों में शिकार , उसके ऊपर प्रेम , फिर संगीत और फिर शक्ति का चित्रण है ।हर चीज में बड़ीशक्ति और क्रियाशीलता है । लेकिन मन्दिर के अन्दर कुछ नहीम है , और जो मूर्तियां हैं भी उनमें शान्ति और खामोशी का चित्रण है । बाहर की गति और क्रियाशीलता से अन्दर की खामोशी और स्थिरता ,मंदिर में बुनियादी तौर पर यही अंकित है । परम सत्य की खोज कभी बन्द नहीं हुई ।

चित्रकला की अपेक्षा वास्तुकला और मूर्तिकला के अधिक विकास की भी अपनी अलग कहानी है । वस्तुत: जो प्राचीन चित्र अब भी मिलते है, वास्तुकला पर ही आधारित हैं । सम्भवत: परम सत्य के बारे में अपने विचारों को व्यक्त करना चित्रकला की अपेक्षा वास्तुकला और मूर्तिकला में ज्यादा सरल है ।

अत: हिन्दू व्यक्तित्व दो हिस्सों में बंट गया है । अच्छी हालत में हिन्दू सगुण सत्य को स्वीकार करके भी निर्गुण परम सत्य को नहीं भूलता और बराबर अपनी अन्तर्दृष्टि को विकसित करने की कोशिश करता रहता है, और बुरी हालत में उसका पाखंड असीमित होता है । हिन्दू शायद दुनिया का सबसे बडा पाखंडी होता है, क्योंकि वह न सिर्फ दुनिया के सभी पाखंडियों की तरह दूसरों को धोखा देता है बल्कि अपने को धोखा देकर खुद अपना नुकसान भी करता है । हिन्दू धर्म अपने माननेवालों को , छोटे से छोटे को भी, ऐसी दार्शनिक समानता , मनुष्य और मनुष्य और अन्य वस्तुओं की एकता प्रदान करता है जिसकी मिसाल कहीं और नहीं मिलती। दार्शनिक समानता के इस विश्वास के साथ ही गन्दी से गन्दी सामाजिक विषमता का व्यवहार चलता है । मुझे अक्सर लगता है कि दार्शनिक हिन्दू खुशहाल होने पर गरीबों और शूद्रों से पशुओं जैसा , पशुओं से पत्थरों जैसा और अन्य वस्तुओं से दूसरी वस्तुओं की तरह व्यवहार करता है । शाकाहार और अहिंसा गिर कर छिपी हुई क्रूरता बन जाती है । अब तक की सभी मानवीय चेष्टाओं के बारे में यह कहा जा सकता है कि एक न एक स्थिति में हर जगह सत्य क्रूरता में बदल जाता है और सुन्दरता अनैतिकता में ।लेकिन हिन्दू धर्म में यह औरों की अपेक्षा ज्यादा सच है ।हिन्दू धर्म ने सचाई और सुन्दरता की ऐसी चोटियां हासिल कीं जो किसी और देश में नहीं मिलतीं, लेकिन वह ऐसे अंधेरे गड्ढों में भी गिरा है जहां तक किसी और देश का मनुष्य नहीं गिरा । जब तक हिन्दू जीवन की असलियतों को , काम और मशीन , जीवन और पैदावार , परिवार और जनसंख्या वृद्धि , गरीबी

और अत्याचार और ऐसी अन्य असलियतों को वैज्ञानिक और लौकिक दृष्टि से स्वीकार करना नहीं सीखता , तब तक वह अपने बंटे हुए दिमाग पर काबू नहीं पा सकता और न कट्टरता को ही खतम कर सकता है , जिसने अक्सर उसका सत्यानाश किया है ।

इसका यह अर्थ नहीं कि हिन्दू धर्म अपनी भावधारा ही छोड़ दे और जीवन और सभी चीजों की एकता की कोशिश न करे । यह शायद उसका सबसे बड़ा गुण है । अचानक मन में भर जाने वाली ममता , भावना की चेतना और प्रसार , जिसमें गांव का लड़का मोटर निकलने पर बकरी के बच्चे को इस तरह चिपटा लेता है जैसे उसी में उसकी जिन्दगी हो ,या कोई सूखी जड़ों और हरी शाखों के पेड़ को ऐसे देखता है जैसे वह उसी का एक अंश हो , एक ऐसा गुण है जो शायद सभी धर्मों में मिलता है लेकिन कहीं उसने ऐसी गहरी और स्थायी भावना का रूप नहीं लिया जैसा हिन्दू धर्म में । बुद्धि का देवता दया के से बिल्कुल अलग है । मैं नहीं जानता कि ईश्वर है या नहीं है लेकिन मैं इतना जानता हूं कि सारे जीवन और सृष्टि को एक में बांधने वाली ममता की भावना है , हालांकि अभी वह एक दुर्लभ भावना है । इस भावना को सारे कामों , यहां तक कि झगड़ों की भी पृष्ठभूमि बनाना शायद व्यवहार में मुमकिन न हो । लेकिन यूरोप केवल सगुण , लौकिक सत्य को स्वीकार करने के फलस्वरूप उत्पन्न झगड़ों से मर रहा है तो हिन्दुस्तान केवल निर्गुण , परम सत्य को ही स्वीकार करने के फलस्वरूप निष्क्रियता से मर रहा है । मैं बेहिचक कह सकता हूं कि मुझे सड़ने की अपेक्षा झगड़े से मरना ज्यादा पसन्द है । लेकिन विचार और व्यवहार के क्या यही दो रास्ते मनुष्य के सामने हैं ? क्या खोज की वैज्ञानिक भावना का एकता की रागात्मक भावना से मेल बैठाना मुमकिन नहीं है ? जिसमें एक दूसरे के अधीन न हो और समान गुणों वाले दो क्रमों के रूप में दोनों बराबरी की जगह पर हों । वैज्ञानिक भावना वर्ण के खिलाफ और स्त्रियों के हक में , सम्पत्ति के खिलाफ और सहिष्णुता के हक में काम करेगी और धन पैदा करने के ऐसे तरीके निकालेगी जिससे भूख और गरीबी दूर होगी । एकता की सृजनात्मक भावना वह रागात्मक शक्ति पैदा करेगी जिसके बिना मनुष्य की बड़ी-से-बड़ी कोशिशें लाभ , ईर्ष्या , और घृणा में बदल जाती हैं ।

यह कहना मुश्किल है कि हिन्दू धर्म यह नया दिमाग पा सकता है और वैज्ञानिक रागात्मक भावनाओं में मेल बैठ सकता है या नहीं । लेकिन हिन्दू धर्म दर असल है क्या ? इसका कोई एक उत्तर नहीं , बल्कि कई उत्तर हैं । इतना निश्चित है कि हिन्दू धर्म कोई खास सिद्धान्त या संगठन नहीं है न विश्वास और व्यवहार का कोई नियम उसके लिए अनिवार्य ही है । स्मृतियों और कथाओं , दर्शन और रीतियों की एक पूरी दुनिया है जिसका कुछ हिस्सा बहुत ही बुरा है और कुछ ऐसा है जो मनुष्य के काम आ सकता है । इन सबसे मिलकर हिन्दू दिमाग बनता है जिसकी विशेषता कुछ विद्वानों ने सहिष्णुता और विविधता में एकता बतायी है । हमने इस सिद्धान्त की कमियाँ देखीं और यह देखा कि कि दिमागी निष्क्रियता दूर करने के लिए कहां उसमें सुधार करने की जरूरत है । इस

सिद्धान्त को समझने में आम तौर पर यह गलती हो जाती है कि उदार हिन्दू धर्म हमेशा अच्छे विचारों और प्रभावों को अपना लेता है चाहे वे जहां से भी आये हों , जबकि कट्टरता ऐसा नहीं करती । मेरे ख्याल में यह विचार अज्ञानपूर्ण है । भारतीय इतिहास के पन्नों में मुझे ऐसा कोई काल नहीं मिला जिसमें आजाद हिन्दू ने विदेशों में विचारों या वस्तुओं की खोज की हो । हिन्दुस्तान और चीन के हजारों साल के सम्बन्ध में मैं सिर्फ पांच वस्तुओं के नाम जान पाया हूं जिनमें सिन्दूर भी है , जो चीन से भारत लाइ गई । विचारों के क्षेत्र में कुछ भी नहीं आया ।

आजाद हिन्दुस्तान का आम तौर पर बाहरी दुनिया से एक तरफा रिश्ता होता था , जिसमें कोई विचार बाहर से नहीं आते थे और वस्तुएं भी कम ही आती थीं , सिवाय चांदी आदि के । जब कोई विदेशी समुदाय आ कर यहां बस जाता और समय बीतने पर हिन्दू धर्म का ही एक अंग या वर्ण बनने की कोशिश करता तब जरूर कुछ विचार और कुछ चीजें अन्दर आतीं । इसके विपरीत गुलाम हिन्दुस्तान और उस समय का हिन्दू धर्म विजेता की भाषा , उसकी आदतों और उसके रहन-सहन की बड़ी तेजी से नकल करता है । आजादी में दिमाग की आत्मनिर्भरता के साथ गुलामी में पूरा दिमागी दीवालियापन मिलता है । हिन्दू धर्म की इस कमजोरी को कभी नहीं समझा गया और यह खेद की बात है कि उदारवादी हिन्दू अज्ञानवश , प्रचार के लिए इसके विपरीत बातें फैला रहे हैं । आजादी की हालत में हिन्दू दिमाग खुला जरूर रहता है , लेकिन केवल देश के अन्दर होने वाली घटनाओं के प्रति । बाहरी विचारों और प्रभावों के प्रति तब भी बन्द रहता है । यह उसकी एक बड़ी कमजोरी है और भारत के विदेशी शासन का शिकार होने का एक कारण है । हिन्दू दिमाग को अब न सिर्फ अपने देश के अन्दर की बातों बल्कि बाहर की बातों के प्रति भी अपना दिमाग खुला रखना होगा और विविधता में एकता के अपने सिद्धान्त को सारी दुनिया के विचार और व्यवहार पर लागू करना होगा ।

आज हिन्दू धर्म में उदारता और कट्टरता की लड़ाई ने हिन्दू-मुस्लिम झगड़े का ऊपरी रूप ले लिया है लेकिन हर ऐसा हिन्दू जो अपने धर्म और देश के इतिहास से परिचित है , उन झगड़ों की ओर भी उतना ही ध्यान देगा जो पांच हजार साल से भी अधिक समय से चल रहे हैं और अभी तक हल नहीं हुए । कोई हिन्दू मुसलमानों के प्रति सहिष्णु नहीं हो सकता जब तक की वह उसके साथ ही वर्ण और सम्पत्ति के विरुद्ध और स्त्रियों के हक में काम न करे । उदार और कट्टर हिन्दू धर्म की लड़ाई अपनी सबसे उलझी हुई स्थिति में पहुंच गयी है और संभव है उसका अंत भी नजदीक ही हो । कट्टरपंथी हिन्दू अगर सफल हुए तो चाहे उनका उद्देश्य कुछ भी हो भारतीय राज्य के टुकड़े कर देंगे न सिर्फ हिन्दू मुस्लिम दृष्टि से बल्कि वर्णों और प्रान्तों की दृष्टि से भी । केवल उदार हिन्दू ही राज्य को कायम कर सकते हैं । अत: पांच हजार वर्षों से अधिक की लड़ाई अब इस स्थिति में आ गयी है कि एक राजनीतिक समुदाय और राज्य के रूप में हिन्दुस्तान के लोगों की हस्ती ही इस

बात पर निर्भर है कि हिन्दू धर्म में उदारता की कट्टरता पर जीत हो । धार्मिक और मानवी सवाल आज मुख्यत: एक राजनीतिक सवाल है । हिन्दू के सामने आज यही एक रास्ता है कि अपने दिमाग में क्रांति लाये , या फिर गिर कर दब जाय । उसे मुसलमान और ईसाई बनना होगा उन्हीं की तरह महसूस करना होगा । मैं हिन्दू-मुस्लिम एकता की बात नहीं कर रहा , क्योंकि वह एक राजनीतिक , संगठनात्मक या अधिक-से-अधिक सांस्कृतिक सवाल है । मैं मुसलमान और ईसाई के साथ हिन्दू की रागात्मक एकता की बात कर रहा हूं , धार्मिक विश्वास और व्यवहार में नहीं , बल्कि इस भावना में कि " मैं वह हूं" ऐसी रागात्मक एकता हासिल करना कठिन मालूम पड़ सकता है , या अक्सर एक तरफा हो सकता है और उसे हत्या और रक्तपात की पीड़ा सहनी पड़ सकती है । मैं यहां अमेरिकन गृहयुद्ध की याद दिलाना चाहूंगा जिसमें चार लाख भाई ने भाई को मारा और छ: लाख व्यक्ति मरे लेकिन जीत की घड़ी में अब्राहम लिंकन और अमेरिका के लोगों ने उत्तरी और दक्षिणी भाइयों के बीच ऐसी ही रागात्मक एकता दिखाई ।हिन्दुस्तान का भविष्य चाहे जैसा भी हो , हिन्दू को अपने आप को बदल कर मुसलमान के साथ ऐसी रागात्मक एकता हासिल करनी होगी । सारे जीवों और वस्तुओं की रागात्मक एकता हासिल करनी होगी । सारे जीवों और वस्तुओं की रागात्मक एकता में हिन्दू का विश्वास भारतीय राज्य की राजनीतिक जरूरत भी है कि हिन्दू मुसलमान के साथ एकता महसूस करे । इस रास्ते पर बड़ी रुकावटें और हार हारें हो सकती हैं , लेकिन हिन्दू दिमाग को किस रास्ते पर चलना चाहिए , यह साफ है । कहा जा सकता है हिन्दू धर्म में उदारता और कट्टरता की इस लड़ाई को खतम करने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि धर्म से ही लड़ा जाय। यह हो सकता है। लेकिन रास्ता टेढा है और कौन जाने कि चालाक हिन्दू धर्म , धर्म विरोधियों को भी अपना एक अंग बनाकर निगल जाय । इसके अलावा कट्टर पंथियों का जो भी अच्छे समर्थक मिलते हैं , वह कम पढ़े-लिखे लोगों में और शहर में रहने वालों में ; गांव के अनपढ लोगों में तत्काल चाहे जितना भी जोश आ जाय पर वे उनके स्थायी आधार नहीं बन सकते । सदियों की बुद्धि के कारण पढ़े-लिखे लोगों की तरह गांव वाले भी सहिष्णु होते हैं । कम्युनिज्म या फासिज्म जैसे लोकतंत्रविरोधी सिद्धान्तों से ताकत पाने की खोज में , जो वर्ण और नेतृत्व के मिलते जुलते विचारों पर आधारित हैं , हिन्दू धर्म का कट्टरपंथी अंश भी धर्मविरोधी का बाना पहन सकता है । अब समय है कि हिन्दू सदियों से इकट्ठा हो रही गन्दगी को अपने दिमाग से निकाल कर उसे साफ करे । जिन्दगी की असलियतों और अपनी परम सत्य की चेतना , सगुण सत्य और निर्गुण सत्य के बीच उसे एक सच्चा और फलदायक रिश्ता कायम करना होगा । केवल इसी आधार पर वह वर्ण , स्त्री , सम्पत्ति और सहिष्णुता के सवालों पर हिन्दू धर्म के कट्टर्पंथी को हमेशा के लिए जीत सकेगा जो इतने दिनों तक उसके विश्वासों को गन्दा करते रहे हैं और उसके देश के इतिहास में बिखराव लाते रहे हैं । पीछे हटते समय हिन्दू धर्म में कट्टरता अक्सर उदारता के अन्दर छिप कर बैठ जाती है । ऐसा फिर न होने पाये । सवाल साफ है । समजहुते से पुरानी गलतियां फिर दुहरायी जाएंगी । इस भयानक युद्ध को अब खतम करना ही होगा । भारत के

दिमाग की एक नई कोशिश तब शुरु होगी जिसमें बौद्धिक का रागात्मक से मेल होगा , जो विविधता में एकता को निष्क्रिय नहीं बल्कि सशक्त सिद्धान्त बनायेगी और जो स्वच्छ लौकिक खुशियों को स्वीकार करके भी सभी जीवों और वस्तुओं की एकता को नजर से ओझल न होने देगी । समाप्त (**जुलाई १९५०**)

पूरे लेख की कड़ियां : १.
http://kashivishvavidyalay.wordpress.com/2007/03/11/lohiahindu-banam-hindu/

२.
http://kashivishvavidyalay.wordpress.com/2007/03/12/lohiahindu-banam-hindu-2/

३. .